Review Research Article Website : www.ijbasr.org ISSN : 2349-1965
International Journal of Basic & Applied Science Research
Peer Reviewed and Refereed Journal Impact factor 0.9 2024; 11(Special Issue); 30 -32

स्त्री – विमर्श की उत्तर गाथा

प्रियंका
हिंदी विभाग, महात्मा गाँधी महाविद्यालय, दरभंगा

किवदंती है कि आधुनिक काल में पहली बार स्त्री के हाथों में कलम आई है और समय समय के साथ – साथ उस कलम की पकड़ भी मजबूत होती जा रही है । आधुनिक रचना का इतिहास साक्षी है कि इस कलम में पहली बार औरत ने अपने हाथों से, अपनी भाषा में, अपने को लिखा हैं, अपने इतिहास को अपने वर्तमान को और अपने आकांक्षित भविष्य को भी उनके त्रास, पूरे संघर्ष और पूरी संभावनाओं में । अब तक के इतिहास में उसे अन्यों ने लिखा था, अब वह अपने को खुद परिभाषित कर रही है। थे स्त्रियाँ मानती हैं कि इनकी अपनी संस्कृति है, अपना इतिहास है, अपनी भाषा है तथा अपनी देह है जो पुरुषों से भिन्न है। स्त्रियों के इस सोच को, चिन्तन को, इनकी मान्यताओं को स्त्री–विमर्श नारीवाद, नारीवादी आन्दोलन, उत्तर आधुनिकतावांदी स्त्री विमर्श की संज्ञा दी जा रहीं हैं। स्त्री विमर्श को कुछ विचारक मार्क्सवाद का विकास या विस्तार मानते हैं। तथा कुछ इस संरचनावाद या उत्तर संरचनावादी विचार करते हैं।

आगे चलकर जैसे–जैसे परिस्थितियों में परिवर्तन आता गया, स्त्री के प्रति समाज के दृश्टिकोण में भी परिवर्तन आता गया। जहाँ वैदिक युग में स्त्री को अत्यंत गौरवपूर्ण स्थान मिला था, वहीं उसके बाद स्त्री के गौरव का निरंतर अवमूल्य होता रहा। जो स्त्री देवी थी अब वह मानवी बनकर रह गई। पुरुष अपनी स्वच्छंदता का उपभोग करता रहा तथा स्त्री वर्जनाओं की परिधि में कैद रही स प्रसिद्ध फ्रांसीसी लेरितका सीमोन के अनुसार "स्त्री पैदा नहीं होती, बनाई जाती है । स्त्री को वचपन से ही मानसिक तौर पर उसके स्त्री होने का अहसास दिलाया जाता है स पितृ सत्तात्मक समाज स्वंय कि सत्ता को बनाये रखने के स्त्री को जन्म से ही उनके नियम से घेर देता है स सिमोन लिखती है :– औरत जमन से ही औरत नहीं होती, बल्कि औरत बनाई जाती है स कोई भी जैविक, मनोवैज्ञानिक या आर्थिक नियति आधुनिक स्त्री के भाग्य की अकेली नियंता नहीं होती स दृ (1) जैसे– जैसे पश्चिमी चिन्तन तथा जीवन षैली का प्रभात भारतीय समाज पर पड़ा वैसे दृ वैसे स्त्री वर्जनाओं को तोड़ने में सक्षम होने लगी । शिक्षा, विज्ञान और सामाजिक व्यवस्था के परिवर्तनों से स्त्री की स्थिति में परिवर्तन आने लगा। आधुनिक शिक्षित स्त्री अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुई, जिससे वह प्राचीन रुढ़ियों से मुक्त होने का प्रयास करने लगी। आधुनिक युग में आर्थिक

Crossponding author: प्रियंका
Email : pk4249244@gmail.com
Date of Acceptance : 22.08.2024
Date of Publication : 30.11.2024

उदारीकरण, सूचना प्रसारण की नई विधियों आदि ने साहित्य को पूर्णरुपेण परिवर्तित कर दिया। पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव तथा नवीन सांस्कृतिक बोध के कारण नवीन दृश्टि का जन्म हुआ तथा हाशिए पर धकेल दी गई स स्त्री समाज में अपना खोया हुआ स्थान ढूंडने लगी, यहीं से स्त्री विमर्ष कि शुरुआत होती है स मूल रूप से स्त्री मुक्ति के आस–पास केन्द्रित रहने वाला साहित्य स्त्री विमर्श माना गया है । हिन्दी दृ साहित्य के स्त्री–विमर्श के संबंध में कृश्णदत्त पालीवाल लिखते हैंः– "स्त्री की व्यथा पर आधुनिक काल के सभी रचनाकारों ने लेखनी उठाई है । लोक उदय और लोक चिन्ता रचनाकर्ता की सच्ची पहचान है । साहित्य हमारे मानुष भाव की रक्षा का प्रयत्न है. जो हमे बेहतर मनुष्य बनाता है। भाव परिश्कार करता है और मनुष्यता की उच्च भूमि पर लेजाकर खड़ा कर देता है । भारत में स्त्री विमर्श की शुरुआत के बारे में 'हंस' जनवरी दृ फरवरी 2000 ई. के विशेष अंक की सम्पादिका अर्चना वर्मा लिखती हैं कि 1978 ई. में अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष था । इसी वर्ष, भारत स्त्री आन्दोलन की विधिवत् शुरुआत हुई। दिल्ली के एक कॉलेज में जहाँ वे पढ़ाती है । वहीं स्वाधीन स्त्रियों की पहली पीढ़ी इसी कॉलेज से निकली है – जिनमें प्रमुख हैः मधुकिश्वर, रूथ वनिता, उवर्श बुटालिया, मायाराव, कीर्ति सिंह, मीरा नायर, त्रिपुरारी शर्मा आदि । अर्चना वर्मा स्त्रियों की मुक्ति स्वाधीनता में देखती हैं और कहती हैः "स्वाधीनता का चुनाव अंततः अकेलेपन का चुनाव है और लम्बे अकेलेपन की परिणति इस अहसास में होती है कि सृजनात्मक सक्रियता जैसे एकाध अपवादों को छोड़कर कैरियर की सफलता जीवन में सार्थकता का स्त्रोत नहीं हो सकती । मातृत्व स्त्री प्राकृतिक रूप से उपलब्धा सार्थकता का एक सहज अवसर है पूर स्वाधीन स्त्री के लिए वर न केवल केरियर में बाधक, अनावश्यक सिरदर्द बल्कि पराधीनता की कुंजी भी है। स्त्री– विमर्श के जबर्दस्त लेखिका प्रभा खेतान का कहना है कि स्त्री–विमर्श के समझने और समझाने के अपने तर्क है । इनमें दम है और किसी को अपने विचारों से कायल करने की क्षमता भी है । उन्होंने हंस के जनवरी–फरवरी 2000 अंक के में "स्त्री–विमर्श : इतिहास में अपनी जगह शीर्शक से एक आलेख लिखा जिसमें इनके चिन्तन को देखा जा सकता है। इस आलेख में उन्होंने स्त्री विमर्श की उत्तर आधुनिक समझ के साथ इसके इतिहास को भी बताने का प्रयास किया है। पश्चिमी दर्शन की अधिकतर अवधारणाओं एवं सिद्धांतों का आधार जैसा कि 'एलिसन जंग' कहती है– "दुनिया को तौलने का पुरुषोचित नजरिया हैं। हालांकि कुछेक दार्शनिक जैसे प्लेटो, जॉन स्टुअर्ट मिल एवं मार्स ने स्त्री पुरुष को समकक्ष रखने की चेश्टा भी किन्तु इनमें से अधिकतर दार्शनिक अरस्तू, कान्ट, हीगेल और नीत्शे को स्त्री जाति की बौद्धिक और तार्किक क्षमता

Review Research Article Website : www.ijbasr.org ISSN : 2349-1965
International Journal of Basic & Applied Science Research
Peer Reviewed and Refereed Journal Impact factor 0.9 2024; 11(Special Issue); 30 - 32

पर गहरा सन्देह था" । स्त्री दलन के संदर्भ में इन्हीं दिनों सुलाभिय फायरस्टोन ने यह कहा कि "स्त्री वास्तव में जन्म से स्त्रीकरण का षिकार है। स्त्री होने के लिए उसे पुरुष सत्ता का वर्चस्व स्वीकारना पड़ता है। वह सत्ता द्वारा निर्धारित होने को बाध्य है और इसी को लिंगीकरण अर्थात जेंडराइजेषन की प्रक्रिया कहते हैं । गायत्री स्पीवॉक के अनुसार इस उत्तर औपनिवेषिक दुनिया में स्त्रीकरण से उत्पन्न जटिल समस्याओं का सामना केवल उत्तर आधुनिक तरीके से ही किया जा सकता है । बात यह है कि उत्तर आधुनिकवाद मैं विभिन्नता का विचित्र जमावड़ा है । सत्ता, सेक्स और स्त्रीकरण के बीच संबंध स्थापित करते हुए हम कह सकते है कि "स्त्री कामना की राजनीति अपने प्राचीन रूप में मानव संघर्श का सबसे गहरा मुद्दा स्त्री पुरुष का यह संघर्ष है जो कि मानव सभ्यता में एक बेमिसाल उदाहरण है"।

निष्कर्षतः

पश्चिम जिस जनतंत्र की विजय घोषणा कर रहा है वह पुरुषों का जनतंत्र है। यह ऐसा जनतंत्र है जहाँ अमीर और अमीर तथा गरीब और गरीब होता जा रहा है । जहाँ स्त्री के प्रति हिंसा बढ़ती जा रही है । माकर्सवाद खतम हो सकता है, मगर समाजवाद तो नहीं ।

संदर्भ सूचीः–

1. सीमोन द बोउवार दृ अनुवादक प्रभा खेतान, स्त्री उपेक्षिता–121
2. कृश्णदत्त पालीवाल, उत्तर आधुनिकता की ओर पृ०–139
3. स्त्री–विमर्ष के असली नकली चेहरे – डॉ० ब्रज कुमार पण्डे पृ० 75
4. वहीं पृ० 77, 78, 82, 88